भारत का सर्वोच्च न्यायालय

आपराधिक अपीलीय अधिकार क्षेत्र

दाण्डिक अपीलीय संख्या 649/2022

(एसएलपी (सीआरएल) संख्या 7893/2021 से उत्पन्न)

सुश्री वाई अपीलकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य व अन्य प्रत्यर्थी

निर्णय

एन. वी. रमन्ना, सीजेआई.

1. अनुमति दी गई ।

2. वर्तमान अपील राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ द्वारा दिनांक 20.09.2021 को एस. बी. आपराधिक विविध जमानत आवेदन संख्या 14458 में पारित अंतिम फैसले और आदेश के खिलाफ दायर की गई है, जिसमें उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी संख्या 2 आरोपी को नियमित जमानत प्रदान की थी।

3. अपीलार्थी–अभियोक्त्री के अधिवक्ता ने तर्क दिये कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी नं. 2 को जमानत बिना किसी तर्क के यांत्रिक तरीके से आदेश देकर त्रुटि की है। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने अपने समक्ष मामले के तथ्यों पर, विशेष रूप से, प्रत्यर्थी नं.2 अभियुक्त द्वारा किए गए कथित अपराधों की गंभीरता पर विचार नहीं किया। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने यह नहीं माना कि प्रत्यर्थी नं. 2 अभियुक्त एक गंभीर अपराधी है और उसके विरुद्ध लगभग बीस आपराधिक मामले लंबित हैं ।ऐसी परिस्थितियों में, इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपनी अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना चाहिए और प्रत्यर्थी नं. 2 – अभियुक्त को दी गई जमानत को रद्द कर देना चाहिए ।

4. प्रत्यर्थी नं. 1–राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलकर्ता के तर्कों का समर्थन किया और कथन किया कि आक्षेपित आदेश एक गुप्त आदेश है जिसे रद्द किया जा सकता है । उन्होंने कथन किया कि प्रत्यर्थी संख्या 2–आरोपी के खिलाफ प्रथमदृष्टया एक मजबूत मामला बनता है, जिसने लगभग तीन से चार वर्षों तक अपनी नाबालिग भतीजी के साथ बलात्कार और यौन उत्पीड़न का जघन्य अपराध किया है। इसके अलावा, प्रत्यर्थी नं.2–आरोपी एक कुख्यात अपराधी है, जिसके खिलाफ बीस आपराधिक मामले दर्ज हैं, जिनमें से कुछ में उसे पहले ही दोषी ठहराया जा चुका है। उसके खिलाफ दर्ज मामलों की सूची में हत्या, हत्या के प्रयास, डकैती आदि से संबंधित मामले शामिल हैं। इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 आरोपी को प्रदत जमानत आदेश को खारिज किया जाना चाहिए।

5. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी नं. 2 के विद्वान अधिवक्ता तर्क देते हैं कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी नं. 2 अभियुक्त और राज्य को सुनने के बाद जमानत मंजूर करने का आक्षेपित आदेश पारित किया । इस न्यायालय के समक्ष कोई नई सामग्री अभिलेख पर नहीं रखी गई है, जिसमें इस न्यायालय से आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने की अपेक्षा की गई है । इसके अतिरिक्त, यह विधि की एक निश्चित स्थिति है कि अपीलीय न्यायालय को अभियुक्त को जमानत मंजूर करने वाले आदेश में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश कम करनी चाहिए।

6. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना।

7. जमानत की मंजूरी से संबंधित पक्षकारों द्वारा किये गए कथनों का उल्लेख करने से पहले, प्रत्यर्थी नं. 2 अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए अभिकथनों का संक्षिप्त विवरण उपलब्ध कराना आवश्यक है। वर्तमान मामले में दिनांक 29.06.2021 के आरोप–पत्र के अनुसार, यह कहा गया है कि अपीलकर्ता–अभियोक्त्री ने दिनांक 30.05.2021 को एक प्राथमिकी दर्ज करायी, जिसमें कहा गया था कि दिनांक 16–17.05.2021 को प्रत्यर्थी संख्या 2 आरोपी, उसके चाचा उसके घर आए थे। लगभग आधी रात को 1 बजे प्रत्यर्थी नं. 2 आरोपी ने उसे अपने कमरे में बुलाया और दो अवसरों पर जबरन उसका बलात्कार किया। हालांकि, शुरू में, उसने किसी को यह नहीं बताया क्योंकि वह डर गई थी, लेकिन उसके कुछ रिश्तेदारों ने उसके अजीब व्यवहार को देखा। जब उन्होंने उससे पूछा कि वह दुखी क्यों है, तो उसने अपने परिवार को पूरी घटना बताई। इस घटना से पहले भी, प्रत्यर्थी नं. 2 अभियुक्त ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया था । 2014 में उन्होंने उसे गलत तरीके से छुआ था। 2015 में उसने उसके साथ बलात्कार

करने की कोशिश की थी। वह उसके साथ चैट करने की कोशिश करता था और अश्लील भाषा का इस्तेमाल करता था और विभिन्न अवसरों पर उसके साथ शारीरिक संबंध बनाने का प्रयास करता था। उसने कभी भी किसी को इन घटनाओं के बारे में नहीं बताया क्योंकि उसने उसे धमकी दी थी। इन आरोपों की पृष्ठभूमि में उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी नं. 2 अभियुक्त को जमानत देने वाले आक्षेपित आदेश की उपयुक्तता पर विचार किया जाना चाहिए ।

8. इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में उन बातों को रेखांकित किया है जिनके आधार पर जमानत मंजूर करते समय दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना है। **गुरचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) (1978) 1 एस. सी. सी. 118** में इस न्यायालय ने उन विभिन्न मापदंडों के बारे में अभिनिर्धारित किया है जिन पर जमानत मंजूर करते समय विचार किया जाना चाहिए। इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया:

> "24 ... ..फिर भी, उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय को नई संहिता की दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 (1) के अधीन जमानत मंजूर करने के प्रश्न पर विचार करने में अपने न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग करना होगा। जमानत मंजूर करने में जिन अभिभावी बातों का हमने पहले उल्लेख किया था और जो नई संहिता की खंड 437 (1) और खंड 439 (1) दोनों के मामले में समान हैं, वे उन परिस्थितियों की प्रकृति और गंभीरता हैं, जिनमें अपराध किया गया है, पीड़ित और गवाहों के संदर्भ में अभियुक्त की स्थिति, न्याय से भागने की संभावना, अपने जीवन को खतरे में डालने के अपराध को दोहराने की संभावना, मामले में गवाहों साथ–साथ उसके अन्वेषण के साथ छेड़छाड़ करने के और अन्य प्रासंगिक कारणों को ध्यान में रखते हुए है, जिन्हें व्यापक रूप से नहीं बताया जा सकता है।"

9. उपर्युक्त कारक एक विस्तृत सूची नहीं बनाते। जमानत की मंजूरी के लिए विभिन्न कारकों पर विचार करने की आवश्यकता है जो अंततः न्यायालय के समक्ष मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इसका कोई स्ट्रेट जैकेट फॉर्मूला नहीं है जिसे कभी भी निर्धारित किया जा सके कि संबंधित कारक क्या हो सकते हैं। तथापि, कतिपय महत्वपूर्ण कारक, जिन पर सदैव विचार किया जाता है, उनमें अन्य

बातों के साथ–साथ अभियुक्त की प्रथमदृष्टया संलिप्तता, आरोप की प्रकृति और गंभीरता, दंड की गंभीरता और अभियुक्त का चरित्र, स्थिति और स्थिति से सम्मिलित है। **(उत्तरप्रदेश राज्य बनाम अमरमणि त्रिपाठी, (2005) 8 एससीसी 21)**

10. जमानत मंजूर करने के चरण में न्यायालय को मामले में साक्ष्य का विस्तृत विश्लेषण करने की आवश्यकता नहीं है। इस तरह का कार्य परीक्षण के चरण में ही किया जा सकता है।

11. एक बार जमानत मंजूर किए जाने के बाद, अपील न्यायालय आमतौर पर उसी में हस्तक्षेप करने की संभावना कम होती है, क्योंकि यह किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित है। **बिहार लीगल सपोर्ट सोसाइटी बनाम भारत के मुख्य न्यायाधीश, (1986) 4 एस. सी. सी. 767** में इस न्यायाधीश की संविधान पीठ ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

> "3 इसी कारण से सर्वोच्च न्यायालय ने आत्म–अनुशासन के मामले के रूप में ऐसे मामलों में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए मार्गदर्शित करने के लिए कुछ मानदंड विकसित किए हैं जहां जमानत या अग्रिम जमानत मंजूर करने या उससे इंकार करने वाले आदेशों के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका दायर की जाती है..... हम इस न्यायालय की पीठ द्वारा अधिकथित इस नीति को दोहराते हैं और अभिनिर्धारित करते हैं कि इस न्यायालय को असाधारण मामलों को छोड़कर, जमानत या अग्रिम जमानत मंजूर करने या देने से इंकार करने वाले आदेशों में सामान्यतः हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि ये ऐसे मामले हैं जिनमें उच्च न्यायालय को सामान्यतः अंतिम मध्यस्थ होना चाहिए।(जोर दिया गया)"

12. उपर्युक्त सिद्धांत का इस न्यायालय द्वारा लगातार अनुसरण किया गया है। **प्रशांत कुमार सरकार बनाम आशीष चटर्जी, (2010) 14 एससीसी 496** में इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः

> "9. हमारा विचार है कि आक्षेपित आदेश स्पष्ट रूप से टिकाऊ नहीं है। यह परम्परा है कि यह न्यायालय, सामान्यतः, अभियुक्त को जमानत मंजूर करने या नामंजूर करने के उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप नहीं करता है तथापि, उच्च न्यायालय

के लिए भी यह समान रूप से आवश्यक है कि वह इस मुद्दे पर इस न्यायालय के अनेक निर्णयों में अधिकथित आधारभूत सिद्धांतों का विवेकपूर्ण, सावधानीपूर्वक और कड़ाई से अनुपालन करते हुए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करे।

यह अच्छी तरह से स्थापित है कि अन्य परिस्थितियों के बीच, जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते समय ध्यान दिए जाने वाले कारक हैं:

(i) क्या यह विश्वास करने का कोई प्रथमदृष्टया या युक्तियुक्त आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है

(ii) अभियोग की प्रकृति और गंभीरता

(iii) दोषसिद्धि की दशा में दंड की गंभीरता

(iv) अभियुक्त के फरार होने या भागने का खतरा, यदि उसे जमानत पर छोड़ दिया जाता है

(v) अभियुक्त का चरित्र, व्यवहार, साधन, स्थिति और स्थिति

(vi) अपराध के दोहराए जाने की संभावना

(vii) गवाहों को प्रभावित किए जाने की युक्तियुक्त आशंका और

(viii) निस्संदेह, जमानत मंजूर करके न्याय को विफल किए जाने का खतरा।

10. यह स्पष्ट है कि यदि उच्च न्यायालय इन सुसंगत बातों पर ध्यान नहीं देता है और यांत्रिक रूप से जमानत मंजूर करता है, तो उक्त आदेश न्यायिक मस्तिष्क के प्रयोग न करने की बुराई से प्रभावित होगा, जो इसे अवैध बनाता है.....।"

13. महिपाल बनाम राजेश कुमार, (2020) 2 एससीसी 118 में इस न्यायालय ने प्रशांत कुमार सरकार (पूर्वोक्त) में अभिनिर्धारित का अनुसरण किया और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया:

"17. जहां जमानत के लिए किसी आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय सुसंगत कारकों पर विचार करने में असफल रहता है, वहां अपील न्यायालय जमानत मंजूर करने वाले आदेश को न्यायोचित रूप से अपास्त कर सकता है। अतः अपील न्यायालय से यह विचार करने की अपेक्षा की जाती है कि क्या जमानत मंजूर करने वाला आदेश बुद्धि के प्रयोग न किए जाने से ग्रस्त है या अभिलेख पर साक्ष्य के प्रथमदृष्टया दृष्टिकोण से प्रकट नहीं होता है। इस प्रकार, इस न्यायालय के लिए यह आंकलन करना आवश्यक है कि क्या, साक्ष्य अभिलेख के आधार पर, यह विश्वास करने के लिए कि अभियुक्त ने अपराध किया था, अपराध की गंभीरता और दंड की गंभीरता को भी ध्यान में रखते हुए प्रथमदृष्टया या उचित आधार मौजूद था।"

14. हाल ही में, **जगजीत सिंह और अन्य वी. आशीष मिश्रा @मोनू और अन्य** में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने **2022 दाण्डिक अपीलीय सं 632** में उन कारकों को दोहराया है जिन पर न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन जमानत मंजूर करते समय विचार करना चाहिए और साथ ही उन परिस्थितियों पर प्रकाश डाला है, जहां यह न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है, जब उपर्युक्त खंड के अधीन अपेक्षाओं का उल्लंघन करते हुए जमानत मंजूर की गई है। इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

"28 हम आरंभ में ही यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन जमानत मंजूर करने की शक्ति व्यापक आयामों में से एक है। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय, जैसा भी मामला हो, को जमानत के लिए किसी आवेदन पर विनिश्चय करते समय पर्याप्त विवेकाधिकार दिया जाता है। लेकिन, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा कई अवसरों पर अभिनिर्धारित किया गया है, यह विवेकाधिकार अनियंत्रित नहीं है। इसके विपरीत, सत्र न्यायालय के उच्च न्यायालय को अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांतों का पालन करते हुए न्यायिक मस्तिष्क के आवेदन के बाद जमानत दी जानी चाहिए, न कि रहस्यमय या यांत्रिक तरीके से।"

15. यह उल्लेखनीय है कि इस मामले में जो विचार किया जा रहा है वह इस बात से संबंधित है कि क्या उच्च न्यायालय ने जमानत मंजूर करने में दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन विवेकाधीन शक्ति का समुचित रूप से प्रयोग किया है। ऐसा निर्धारण यह विनिश्चय करने से भिन्न है कि क्या जमानत की मंजूरी के पश्चात् परिस्थितियों ने उसे रद्द करना आवश्यक बना दिया है।पहली स्थिति न्यायालय से यह विश्लेषण करने की अपेक्षा करती है कि क्या जमानत मंजूर करने वाला आदेश अवैध, विकृत, अनुचित या मनमाना था। दूसरी ओर, जमानत के रद्दकरण के लिए एक आवेदन इस बात को देखता है कि क्या रद्द करने की आवश्यकता वाली पर्यवेक्षण परिस्थितियां पैदा हुई हैं। **नीरू यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 16 एससीसी 508** में इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया हैः

> "12. हमने जमानत मंजूर करते समय ध्यान में रखने के लिए कुछ सिद्धांतों का उल्लेख किया है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा समय–समय पर निर्धारित किया गया है। यह विधि में सुस्थापित है कि जमानत मंजूर किए जाने के पश्चात् उसका रद्दकरण, क्योंकि अभियुक्त ने स्वयं दुर्व्यवहार किया है या ऐसे रद्दकरण की अपेक्षा करने वाली कुछ पर्यवेक्षण परिस्थितियों में, जमानत मंजूर करने वाले आदेश से बिल्कुल भिन्न डिब्बे में है जो अन्यायपूर्ण, अवैध और विकृत है।यदि किसी मामले में, जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते समय जिन सुसंगत कारकों पर विचार किया जाना चाहिए था, उन ध्यान दें नहीं दिया गया है या जमानत असंगत विचारों पर आधारित है, तो निर्विवाद रूप से वरिष्ठ न्यायालय जमानत की इस तरह की मंजूरी के आदेश को अपास्त कर सकता है। इस तरह का मामला एक अलग श्रेणी का है और एक अलग क्षेत्र में है। दूसरी प्रकृति के किसी मामले पर विचार करते समय, न्यायालय अभियुक्त द्वारा शर्तों के उल्लंघन या बाद में हुई पर्यवेक्षण परिस्थितियों पर ध्यान नहीं देता है। इसके विपरीत, यह न्यायालय द्वारा पारित आदेश की औचित्य और शुद्धता की जांच करता है।"

16. वर्तमान मामले में, यह अवधारित करना आवश्यक है कि क्या उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी नं. 2–अभियुक्त को जमानत मंजूर करते समय इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विभिन्न मापदंडों का पालन करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन अपने

विवेकाधिकार का उचित प्रयोग किया है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के केवल अवलोकन से यह पता नहीं चलता है कि न्यायालय ने जमानत की मंजूरी के लिए किसी भी प्रासंगिक कारक पर विचार किया है। इस समय आक्षेपित आदेश को उद्धृत करना प्रासंगिक होगा–

> "1. याचिकाकर्ता को भा.दं.सं. की खंड 354, 354 बी, 354 डी, 376 (2) एफ, 376 (2) एन, 450, 506, 509 और पॉक्सो एक्ट की धारा 9 एन/10, 5 एल/6, 5 (एन)/6 और 18 के तहत अपराध के लिए सीकर जिले के उद्योग नगर थाने में दर्ज प्राथमिकी संख्या 319/2021 के संबंध में गिरफ्तार किया गया है।
>
> 2. याचिकाकर्ता के विद्वत अधिवक्ता कथन करते हैं कि याचिकाकर्ता को इस मामले में झूठा फंसाया गया है।वह 30 मई 2021 से सलाखों के पीछे हैं। याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप–पत्र दायर किया गया है। याची के विद्वत अधिवक्ता आगे कथन करते हैं कि विचारण के दौरान, विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा अभियोक्त्री का बयान दर्ज किया गया था, जिसमें अभियोक्त्री ने अपने बयान में सुधार किया है। मुकदमे की समाप्ति में लंबा समय लग सकता है।
>
> 3. शिकायतकर्ता के विद्वत अधिवक्ता ने जमानत आवेदन का विरोध किया है और प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता एक आदतन अपराधी है और उसके खिलाफ पासा में मामला दर्ज किया गया है।
>
> 4. विद्वत लोक अभियोजक ने जमानत आवेदन का विरोध किया है।
>
> 5. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा पेश किए गए तर्कों पर विचार करते हुए और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और मामले के गुण–दोष पर कोई राय व्यक्त किए बिना, यह अदालत याचिकाकर्ता को जमानत पर रिहा करना उचित समझती है।

> 6. तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की खंड 439 के अधीन जमानत आवेदन की अनुज्ञा दी जाती है और यह आदेश दिया जाता है कि अभियुक्त–याची ओमप्रकाश जीवनराम @ओमा थेहाट पुत्र बोदुराम को जमानत पर रिहा किया जाएगा बशर्ते वह सुनवाई की सभी तिथियों पर और जब ऐसा करने के लिए कहा जाए तो संबंधित न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के लिए विद्वत विचारण न्यायाधीश की संतुष्टि के लिए 25,000/– रुपए की दो प्रतिभूतियों के साथ 50,000/– रुपए की राशि का एक व्यक्तिगत मुचलका प्रस्तुत करता है।"

17. सामान्य अवलोकन के अलावा कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखा गया है, मामले के वास्तविक तथ्यों की कहीं भी जानकारी नहीं दी गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन कारकों का कोई संदर्भ नहीं है जिनके कारण अंततः उच्च न्यायालय ने जमानत मंजूर की।वास्तव में, आक्षेपित आदेश से कोई तर्क स्पष्ट नहीं है ।

18. तर्क न्यायिक प्रणाली का जीवन रक्त है। प्रत्येक आदेश को तर्कसंगत होना चाहिए, यह हमारी प्रणाली के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है। एक अकारण आदेश मनमानी के दुष्चक्र से ग्रस्त होता है। **पूरन बनाम रामबिलास, (2001) 6 एससीसी 338** में इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः

> "8..... कारण बताना गुण–दोष पर चर्चा करने से भिन्न है। जमानत मंजूर करने के चरण में साक्ष्यों की विस्तृत जांच और मामले के गुणों के विस्तृत प्रलेखन का कार्य नहीं किया जाना है। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने दिनांक 11–9–2000 के आदेश में साक्ष्य के गुण–दोष पर चर्चा की, जिसकी निंदा की गई थी। इसका यह अर्थ नहीं था कि जमानत मंजूर करते समय प्रथमदृष्टया यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि जमानत क्यों दी जा रही थी, कुछ कारणों का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं थी।(जोर दिया गया)"

19. कल्याण चंद्र सरकार बनाम राजेश रंजन, (2004) 7 एससीसी 528 में इस न्यायालय ने जमानत से संबंधित मामले में तर्क के महत्व को इंगित किया और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः

"11. जमानत मंजूर करने या इनकार करने के संबंध में विधि बहुत अच्छी तरह से स्थापित है। जमानत मंजूर करने वाले न्यायालय को अपने विवेकाधिकार का प्रयोग न्यायोचित तरीके से करना चाहिए न कि अनुक्रम के रूप में। हालांकि जमानत मंजूर करने के चरण में साक्ष्यों की विस्तृत जांच और मामले की योग्यता के विस्तृत प्रलेखन की आवश्यकता नहीं है । ऐसे आदेशों में यह बताने की आवश्यकता है कि जमानत क्यों दी जा रही थी, विशेषतौर पर जहां प्रथमदृष्टया अभियुक्त पर गंभीर अपराध करने का आरोप लगाया गया है। इस तरह के कारणों से रहित कोई भी आदेश मस्तिष्क का उपयोग न करने से प्रभावित होगा। (जोर दिया गया)"

20. **बृजनंदन जायसवाल बनाम मुन्ना, (2009) 1 एस. सी. सी. 678** में, जिसमें गंभीर अपराध में जमानत मंजूर करने की चुनौती से संबंधित था, इस न्यायालय ने वही स्थिति दोहराई है जो **कल्याण चंद्र सरकार**(उपर्युक्त) में व्यक्त की गई थी।इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया हैः

"12. ..... हालाँकि, हम आदेश से पाते हैं कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा जमानत प्रदान करने में कोई कारण नहीं दिये गए थेऔर ऐसा लगता है बिना मामले के पक्ष और विपक्ष पर विचार करते हुए यंत्रवत् रूप से प्रदान किया गया । जमानत देते समय, विशेष रूप से हत्या जैसे गंभीर मामलों में, अनुदान को न्यायोचित ठहराने के कुछ कारण आवश्यक हैं।(जोर दिया गया)"

21. उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने गंभीर अपराधों वाले मामलों पर विशेष जोर देने के साथ लगातार तर्कसंगत जमानत आदेशों की आवश्यकता को बरकरार रखा है।वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी नं. 2 आरोपी पर उन्नीस साल की अपनी युवा भतीजी के खिलाफ बलात्कार का गंभीर अपराध करने का आरोप लगाया गया है। तथ्य यह है कि प्रत्यर्थी नं. 2–अभियुक्त एक आदतन अपराधी है और उसके खिलाफ दर्ज लगभग बीस मामलों का आक्षेपित आदेश में उल्लेख भी नहीं किया गया है । इसके अलावा, उच्च न्यायालय उस प्रभाव पर विचार करने में विफल रहा है जो प्रत्यर्थी नं. 2–अभियुक्त का परिवार के एक बड़े सदस्य के रूप में अभियोक्त्री पर पड़ सकता है ।

कारावास की अवधि, जो केवल तीन महीने की है, इतनी बड़ी नहीं है कि इस प्रकृति के अपराध में जमानत मंजूर करने के लिए न्यायालय पर दबाव डाले।

22. उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश रहस्यपूर्ण है और इसमें मस्तिष्क के किसी अनुप्रयोग का संकेत नहीं दिया गया है। हाल ही में जमानत मंजूर करने या देने से इंकार करने के लिए ऐसे आदेश पारित करने की प्रवृत्ति रही है, जहां न्यायालय सामान्य रूप से यह मत व्यक्त करते हैं कि तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किया गया है। ऐसा कोई विशिष्ट कारण नहीं बताया गया है जिससे न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया जा सके।

23. इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के बावजूद ऐसी स्थिति बनी हुई है जिसमें इस न्यायालय ने ऐसी प्रथा का अनुमोदन नहीं किया है। महिपाल (पूर्वोक्त) के मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त कियाः

> "25. केवल""अभिलेख का अवलोकन करने""और""मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर""अभिलेख का अभिलेखन करना तर्कसंगत न्यायिक आदेश के प्रयोजन को पूरा नहीं करता है।"यह खुले न्यायाधीश का एक बुनियादी आधार है, जिसके लिए हमारी न्यायाधीशिक प्रणाली प्रतिबद्ध है, कि जिन कारकों ने न्यायाधीशा के दिमाग में अस्वीकृति या जमानत की मंजूरी को प्रभावित किया है, वे पारित आदेश में दर्ज किए जाते हैं। खुला न्यायाधीश इस धारणा पर आधारित है कि न्यायाधीश न केवल किया जाना चाहिए, बल्कि इसे स्पष्ट रूप से और निस्संदेह रूप से किया जाना चाहिए।तार्किक निर्णय देने के लिए न्यायाधीशों का कर्तव्य इस प्रतिबद्धता के केंद्र में है। जमानत मंजूर करने के प्रश्न आपराधिक अभियोजन से गुजरने वाले व्यक्तियों की स्वतंत्रता के साथ–साथ यह सुनिश्चित करने में आपराधिक न्यायाधीश प्रणाली के हितों से संबंधित हैं कि अपराध करने वालों को न्यायाधीश में बाधा डालने का अवसर न दिया जाए। न्यायाधीश यह बताने के लिए बाध्य हैं कि वे किस आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं। (जोर दिया गया)"

24. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाता है। तदनुसार दाण्डिक अपीलीय की अनुमत की जाती है। जमानत बांड

रद्द कर दिए जाते हैं। प्रत्यर्थी संख्या 2 आरोपी को इस आदेश की प्राप्ति के एक सप्ताह के भीतर आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है, ऐसा न करने पर संबंधित पुलिस अधिकारी उसे हिरासत में ले लेंगे।

(एन. वी. रमन्ना)

(कृष्ण मुरारी)

नई दिल्ली

19 अप्रैल, 2022

(Translation has been done through AI Tool : SUVAS with the help of Translator)

Disclaimer : The translated judgment in vernacular language made for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purposes. For all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.